International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 02-06-2024, Accepted: 24-06-2024, Published: 18-07-2024
Volume 10, Issue 3, 2024, Page No. 16-19

हिंदी ललित निबंध साहित्य और स्त्री चिंतन

हेमलता सिंह
हिंदी साहित्य विभाग, महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र, भारत

सारांश
नारी–मुक्ति एक सभ्य–स्वस्थ समाज की आकाँक्षा भी है और आधार भी। नारी–शोषण मनुष्य सभ्यता का कलंक है। नारी शोषण के बरक्स नारी मुक्ति के लिए मनुष्य–समाज परंपरा से प्रयासरत भी रहा है। आधुनिक युग नारी–मुक्ति आंदोलनों का एक समृद्ध इतिहास है। बावजूद इसके नारी–स्वतंत्रता की जरूरत आज भी बनी हुई है। इस युग में नारी मुक्ति के अनेक मोर्चे तो सामने आते ही हैं, साथ ही नारी शोषण के नये तरीके भी देखने को मिलते हैं। प्रस्तुत शोध आलेख इस विसंगति पर ध्यान आकृष्ट कराता है। साथ ही नारी मुक्ति और उसके संघर्ष की परंपरा को हिंदी निबंधकार अपनी किस नजर से देखता है, नारी मुक्ति की परंपरा में हिंदी निबंधों का अपना वैचारिक योग कैसा रहता है, इन बिन्दुओं का प्रस्तुतीकरण प्रस्तुत शोध आलेख का मूल मन्तव्य है।

मूल शब्दः नारी–मुक्ति, मातृसत्ता–पितृसत्ता, पौराणिक युग, मध्यकाल, भक्ति–आंदोलन, आधुनिकीकरण, भोगवादी समाज, उपभोक्तावादी मनुष्य आदि।

"मुक्त करो नारी को मानव, चिरवन्दिनी नारी को
युग–युग की निर्मम कारा से, जननि सखी प्यारी को।"

साहित्य समाज का दर्पण है, यह बात अक्षरशः सत्य नहीं है क्योंकि उसमें साहित्यकार की अपनी कुछ कल्पनाएँ भी होती हैं। वह उस युग परिवेश को अपनी किस दृष्टि से देखता या देखना चाहता है। साथ ही यह भी कहा–माना जा सकता है कि साहित्य के माध्यम से हम किसी भी काल–परिवेश को अच्छे से जान सकते हैं। क्योंकि साहित्यकार उस समय का दृष्टा होता है। साहित्यकार एक चिंतनशील, विवेकशील प्राणी है जो अपने विचार और विवेक से साहित्य रच साधारण मानव तक प्रेषित कर उन्हें सोचने– समझने के लिए झकझोर देता है। समाज में नारी को लेकर प्राचीन समय से लेकर वर्तमान समय तक अनेक स्थितियों का चित्रण हमें साहित्य में दिखता है। मातृसत्तात्मक समाज से पितृसत्तात्मक समाज तक आते हुए स्त्री की स्थिति में हुए परिवर्तनों को साहित्यकार किस प्रकार प्रस्तुत करता है, यह जानना प्रासंगिक भी है और रोचक भी।

आज वर्तमान समाज में नारी की स्थिति अपेक्षाकृत मजबूत हुई है तो उसके शोषण के आधुनिक तरीके भी इजाद हुए हैं। आज मानव जहाँ विकास की नई–नई ऊचाईयों को छू रहा हैं, वहीं दूसरी तरफ स्त्री–पुरुष को लेकर उसके विचार अभी भी संकीर्ण बने हुए हैं। जहाँ स्त्रियाँ पुरुषों के साथ हर गतिविधि में सहभागिता कर रही हैं, वहीं इस समाज का दूसरा पक्ष यह है कि स्त्री के दैहिक शोषण–बलात्कार जैसी अनेक विसंगतियाँ और विडम्बनाएँ भी देखने को मिल रही हैं। महिलाएँ कहने को जितनी आजाद हैं, वहीं वह अपने को उतनी असुरक्षित भी महसूस करती हैं। जैसे–जैसे हमारे देश में शिक्षा, साहित्य, संस्कृति, विधान कला, कृषि और व्यवसाय जैसे अनेकानेक क्षेत्रों में सफलता के नये–नये आयाम तय हो रहे हैं, वैसे–वैसे मनुष्य अपनी मनुष्यता खोकर स्त्रियों के दैहिक शोषण के प्रति और हीन होता जा रहा है। औरत कामकाजी हो या घरेलू उसके शोषण का सिलसिला अनवरत बढ़ रहा है।

यांत्रिक और आधुनिकीकरण के समय में मनुष्य प्राचीन अपनी परम्परा और संस्कृति से जहाँ दूर होता जा रहा है, वहाँ उसके अंदर के कोमल तत्त्व की भी मृत्यु होती जा रही है। वह अपनी महान सांस्कृतिक संपदा को छोड़कर उन्मत विवेकान्ध की तरह पश्चिम की जूठन की ओर भाग रहा है। साहित्यकार अपनी रचना के द्वारा बार–बार मनुष्य जाति को अपनी संस्कृति ओर ले जाने की कोशिश करता है। इस साध्य की सिद्धि के लिए सबसे अच्छा साधन साहित्यकार निबंध को मानता है, क्योंकि यह विचार को व्यक्ति सापेक्ष तक पहुंचाने का सबसे अच्छा माध्यम है। निबंध व्यक्ति–मस्तिष्क को झकझोर कर सोचने–समझने के लिए मजबूर करने की क्षमता तो रखता ही है, मन को रमाये रखने की रोचकता भी रखता है। इसीलिए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कहा भी है कि "यदि गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है तो निबन्ध गद्य की कसौटी है।"[1] भारतीय सांस्कृतिक गौरव एवं शाश्वत महत्व को आधुनिक मनुष्य (विशेष रूप से भारतीय) के सामने बखूबी प्रस्तुत करने का महत्वपूर्ण कार्य हिंदी ललित निबंधकार विशेष रूप से करते हैं।

हिंदी के निबंधकार नारी–समाज का चित्रण किन–किन रूपों में करते है, इस पर विचार विमर्श करने से पहले यह जानना आवश्यक प्रतीत होता है कि प्राचीन सभ्यता से लेकर वर्तमान समाज की स्थिति में, उसकी परिस्थितियों में क्या–क्या बदलाव आये जिनको दृष्टिपथ में रखकर हमारे निबंधकारों ने अपने–अपने निबंधों की रचना की।

प्राचीन समय में स्त्री को पूरे समाज की आधारशिला कहा गया। नारी को विधाता की वह सर्वोत्तम परिकल्पना कहा गया जिसके बिना सृष्टि का विकास–क्रम आगे बढ़ ही नहीं सकता। उपनिषद में सृष्टि की संपूर्ण रिक्तता की पूर्ति स्त्री से मानी गई हैकृ "अयमकाशः स्त्रिया पूर्यते।" ऋग्वेद में कहा गया है कि स्त्री ही ब्रह्म हैकृ"स्त्री हि ब्रह्म वभूविध।"

इन कथनों के आधार पर यह माना जाना चाहिए कि वैदिक काल में नारी का स्वरूप बहुत उज्जवल और सम्मानित था। इस युग में महिलाओं और पुरुषों की स्थिति में समानता थी। शिक्षा, विवाह, सम्पत्ति, आत्मविकास में दोनों को बराबरी का अधिकार था। वह सभा व समितियों में स्वतंत्रतापूर्वक भाग लेती थी। 'यजुर्वेदश में नारी को महिमापूर्ण विशेषताओं से गरिमामंडित किया गया। उसे रमणीया, पूजनीया, चन्द्र के समान आह्लादकारिणी, प्रकाशवती जो अपने ज्योति से अंधकार को दूर करने वाली, दीनता एवं हीनता के भावों से रहित, परंपरा से पूर्ण अर्थात् नारी को उत्तम गुणों से परिपूर्ण कर उसका महिमामंडन किया गया है। संस्कृत भाषा का 'महिला' शब्द स्त्री की महिमा की ही अभिव्यंजना करता है। इन सभी गुणों से युक्त नारी दैवीय स्वरूप के साथ मानवीय नारी भी थी, जिसका समाज वही मान–सम्मान

तथा अधिकार था जो कि पुरुषों का था। इस मान–सम्मान और अधिकार के बरक्स इस युग कुछ ऐसी टिप्पणियाँ भी मिलती हैं जो स्त्री–व्यक्तित्व पर 'आक्षेप'–सी लगती हैं। जैसे मैत्रयीसंहिता में स्त्री को झूठ का अवतार कहा गया है। दरअसल हर काल विशेष के अपने कुछ गुण होते हैं तो कुछ अवगुण भी। संपूर्णता में देखें तो वैदिक समाज में महिलाओं का जितना सम्मान था, उसे झुठलाया नहीं जा सकता।

पौराणिक युग में नारी वैदिक युग के देवी पद से उतरकर सहधर्मिणी के स्थान पर आ गई थी। सभी धार्मिक अनुष्ठानों में सहभागिता पुरुष के समकक्ष थी। रामायण काल में श्रीरामचन्द्र ने अश्वमेध यज्ञ के समय सीता की हिरण्यमयी प्रतिमा बनाकर यज्ञ किया था। कालांतर में जैसे–जैसे, परिवर्तन हुआ, वैसे–वैसे स्त्रियों की स्थिति दयनीय होती गई। मुस्लिम आक्रांताओं के आगमन के बाद स्त्रियों की स्थिति पर अत्यधिक नकारात्मक प्रभाव पड़ा। अपहरण, बलात्कार जिसके परिणामस्वरूप डर से स्त्रियों (बच्चियों) का समय से पहले विवाह कराना, पर्दा प्रथा, सती प्रथा जैसी कई कुप्रथाएँ सामने आयीं। वैसे इन आक्रमणों से पहले भी सामंती व्यवस्था के पसर जाने के चलते ऐसी कई पाबंदियाँ थीं जो सिर्फ स्त्रियों के लिए थीं। परंतु मुस्लिम आक्रांताओं–मुगलों के आगमन से यह प्रथाएँ और मजबूती के साथ अपनी जड़ें जमाती गयीं और अपना विस्तार समाज के कई वर्गों में करती गयीं। स्त्रियों की स्वतंत्रता और स्वच्छंदता पर अनेक प्रकार के अंकुश लगाये जाने लगे। मुगल शासन, सामन्ती व्यवस्था, केन्द्रीय सत्ता का विनष्ट होना, विदेशी आक्रमण और शासकों की विलासितापूर्ण प्रकृति ने महिलाओं को उपभोगू की वस्तु ही समझा। इन सबके कारण बाल–विवाह, पर्दा प्रथा, अशिक्षा आदि विभिन्न सामाजिक कुरीतियों का समाज में प्रवेश हुआ, जिन्होंने महिलाओं की स्थिति को और दीन–हीन बना दिया।

मध्यकाल जैसी विषम परिस्थिति–समय में कुछ ऐसी स्त्रियाँ भी थीं जो स्त्री–शक्ति और महत्व की नुमाइंदगी करती हैं जैसे कि रजिया सुल्तान जो दिल्ली पर शासन करने वाली एकमात्र महिला थी। गोंड की महारानी दुर्गावती, चांद बीवी, जहाँगीर की पत्नी नूरजहाँ, मुगल राजकुमारी जहाँआरा और जेबुन्निसा सुप्रसिद्ध कवयित्री थीं, इन सबने मुगल साम्राज्य को भी प्रभावित किया।

विशेषतः देखा जाए तो इस दौर के भक्ति–आंदोलन ने भक्ति–कविता के माध्यम से समाज में स्त्रियों की प्रतिष्ठा को स्थापित किया। भक्ति आंदोलन ने मध्यकालीन समाज के समक्ष अंडाल (तमिल संत कवयित्री), अक्का महादेवी (कन्नड़ संत कवयित्री), ललद्यद (लल्लेश्वरी) (कश्मीरी भक्त कवयित्री), जनाबाई–सक्कुबाई–बहिनाबाई (मराठी संत कवयित्रियाँ), सहजोबाई–दयाबाई–मीराबाई (हिंदी संत–भक्त कवयित्रियाँ) आदि के रूप में स्त्री अभिव्यक्ति के सशक्त स्वर पैदा किये। इस प्रतिष्ठा के बावजूद तत्कालीन समाज में सामान्य स्त्री की हैसियत दोयम दर्जे की ही थी। मध्यकाल में सामान्यतः स्त्रियों की स्थिति में गिरावट ही देखी गयी। मुगलकालीन रचनाकार गोस्वामी तुलसीदास ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'रामचरितमानस' में गँवार व्यक्ति, शूद्र, पशु और नारी को एक समान मानकर उस समाज की स्थिति का वर्णन किया जिसमें इन चारों पर नियंत्रण दंड विधान से किया जाता है– "ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी।।"[2]

ब्रिटिश आगमन के काल को महिलाओं के लिए पुनरोत्थान युग कहा जा सकता है। इस समय समाज में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक अनेक परिवर्तन हुए। स्त्रियों की स्थिति के साथ औद्योगिक, शिक्षा का विस्तार, सामाजिक आंदोलन व महिला संगठन के उदय के साथ महिलाओं की स्थिति में भी सुधार आया। इस युग को नारी चेतना का युग कहा गया। किंतु जिस प्रकार हिमालय से नदी की स्वच्छ धारा बहती है, और रास्ते में आए अनेक धाराओं, पहाड़ों से टकराती जड़ी बूटियों के साथ–साथ अपने में गंदगी भी समेट बहा ले जाती है, उसी प्रकार इस काल में जहां स्त्रियों को आगे बढ़ने के अवसर, अधिकार, शिक्षा, समानता प्राप्त हुई वहीं शोषण, बलात्कार, लैंगिक दुर्व्यवहार, दहेज, छेड़छाड़, सम्पति का अधिकार न होना जैसी अनेक समस्याओं–परिस्थितियों का भी सामना करना पड़ा।

आधुनिक काल में साहित्य के क्षेत्र में कई विधाएँ सामने आयीं, जिनमें निबंध एक ऐसी विधा थी जो अपने पाठकों से सीधे बात करने का माध्यम बनी। उस काल परिवेश में पत्रकारिता के माध्यम से इस विधा ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। आधुनिक हिंदी के निबंधकारों ने नारी विमर्श का चित्रण किन–किन रूपों में किया यह उनके निबंधों से अच्छी तरह जान सकते हैं। आधुनिक युग की मीरा कही जाने वालीं छायावादी निबंधकार महादेवी वर्मा नारी को पुरुष की चिरसंगनी के रूप में दिखाती हुईं लिखती हैं– "नारी केवल मांस–पिण्ड की संज्ञा नहीं है। आदिम काल से आज तक विकास पथ पर पुरुष का साथ देकर, उसकी यात्रा को सरल बनाकर उसके अभिशापों को स्वयं झेलकर और अपने वरदानों से जीवन में अक्षय शक्ति भरकर मानव ने जिस व्यक्तित्व, चेतना और हृदय का विकास किया है, उसी का पर्याय नारी है।"[3]

भारतीय नारी के आदर्श को रेखांकित करते हुए अध्यापक पूर्णसिंह अपने निबंध 'कन्यादान' में लिखते हैं कि जिस प्रकार सीता ने बारह वर्ष राम के साथ जगलों में वनवास काटा, दमयन्ती जंगल–जंगल वनों में नल के लिए घूमती रही, सावित्री ने अपने पति के लिए यम तक को पराजित कर दिया। यह ऐसा नारी चित्रण है जिसमें नारी को सम्मान प्राप्त होता है और समाज में आदर्श के रूप में चिन्हित होती हैं। आज का आधुनिक समाज जहाँ विकास की ऊंचाइयों को छू चाँद तक पहुंच रहा है, बरक्स इसके समाज में स्त्री दशा आज भी दयनीय बनी हुई है। विज्ञापनों ने तो स्त्री शरीर का प्रचार–प्रदर्शन कर उन्हें भोग्य वस्तु के रूप में परिभाषित कर आकर्षण का केंद्र बना दिया है। जहाँ आज द्रौपदी मुर्मू जैसी आदर्श नारी राष्ट्रपति है, वहीं दूसरी तरफ देह–अंग प्रदर्शन कर स्त्री के व्यक्तित्त्व महत्व को दैहिक महत्व पर तौलती स्त्री भी।

यह आधुनिकता की विडंबना है, विसंगति है। इस विसंगति के बरक्स महाप्राण सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की कविता सहज ही आधुनिक परिवेश की स्त्री के क्लिष्ट आदर्श का चित्र हमारे सामने प्रस्तुत कर देती है। जिसमें वह कठोर परिश्रम से अपना जीवन निर्वाह करती है, अपने जिस्म का सौदा नहीं करती है.

"वह तोड़ती पत्थर;
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ परः
वह तोड़ती पत्थर।
कोई न छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार;
श्याम तन, भर बँधा यौवन,
नत नयन प्रिय, कर्म–रत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार–बार प्रहार–
सामने तरु–मालिका अट्टालिका, प्राकार।
चढ़ रही थी धूप;
गर्मियों के दिन
दिवा का तमतमाता रूप;
उठी झुलसाती हुई लू,
रुई ज्यों जलती हुई भू,
गर्द चिनगीं छा गईं,
प्रायः हुई दुपहर–
वह तोड़ती पत्थर।

देखते देखा मुझे तो एक बार
उस भवन की ओर देखा, छिन्नतार;
देखकर कोई नहीं,
देखा मुझे उस दृष्टि से
जो मार खा रोई नहीं,
सजा सहज सितार,
सुनी मैंने वह नहीं जो थी सुनी झंकार
एक क्षण के बाद वह काँपी सुघर,
ढुलक माथे से गिरे सीकर,
लीन होते कर्म में फिर ज्यों कहा–
'मैं तोड़ती पत्थर।"[4]

यह यौवन प्राप्त स्त्री अपने प्रिय में और कर्म में एक साथ डूबी हुई है। वह अपने हाथों से बार–बार हथौड़े से पत्थर पर चोट करती है। वह अपने भाग्य और भविष्य का निर्माण अपने कर्म से करती है। किंतु शीघ्र अति शीघ्र ऊँचाईयों को छूने वाली स्त्री अपने शरीर का प्रदर्शन कर आगे बढ़ना चाहती है। जिस प्रकार सरदार पूर्णसिंह अपने निबंध 'कन्यादान' में भारतीय इतिहास के नारी पात्र–
सीता–सावित्री–गार्गी–दमयन्त्री–द्रोपदी–लक्ष्मीबाई–कमला–विजय लक्ष्मी–इंदिरा– अनेक संयत नारियों के आदर्श को सामने रख आज समाज को मर्यादा और आदर्श जीवन की ओर ध्यान आकृष्ट करते हैं, उसी प्रकार शांतिप्रिय द्विवेदी अपने निबंध 'शरत्साहित्य औपन्यासिक स्तर' में नारी व्यक्तित्व की गरिमा और महिमा को प्रतिष्ठित करते हुए बताते हैं कि नारी सम्मान की प्रतीक है, कीड़े–मकोड़े का प्रतीक नहीं। मनुष्य होने के नाते मानवीय साधना को ग्रहण करती है। वह सभी को अपना प्रेम बाँटती रही है। त्याग और समर्पण के कारण उसे बड़ी आसानी से दैवीय रूप का दर्जा प्राप्त हो जाता है।
यशपाल ने अपने निबंध 'बात बात में बात' में नारी को सदियों से विलासिता और भोग की वस्तु समझने वाले पुरुष समाज को चुनौती दी। उन्होंने कहा कि जो स्त्री सिर पर भारी घड़ा रखे, गोबर के कंडे ढोने वाली नारी से आप अपने को अलग नहीं दिखा सकते। और तो और आप उनसे ठीक से बात करना भी सही नहीं समझते। आप तो उन्हें पूछते हैं जो कभी अपने हाथों से काम नहीं करतीं और ना ही अपने को पैदल चलने योग्य समझती हैं। ऐसी महिलाएँ कहीं की शोभा बढ़ाती हैं या साहबों के खेलने की वस्तु होती हैं। आज के भोगवादी समाज का व्यक्ति आदर्श रूप की जगह देह प्रदर्शन और अनिश्चित आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सोचने–समझने की मानसिकता क्षमता खोता जा रहा है। यशपाल भी इस निबंध के माध्यम से कर्मशील नारी की प्रतिष्ठा करते हैं।
वर्तमान समाज स्वतन्त्रता की मर्यादाओं को तोड़ता हुमा उच्छृंखलता का व्यवहार कर रहा है। भौतिक विकास के सकटों में एक संकट पुरुष का स्त्री के प्रति दृष्टिकोण का भी है। वर्तमान मनुष्य की भोग–तृष्णा इतनी दैहिक हो गयी है कि वह स्त्री को भावना–प्रेम की मधुमय मूर्ति के रूप में न देखकर अपनी भोग्य–देह वस्तु के रूप में देखता है। इस कुत्सित विचार ने समाज में स्त्री–पुरुष संबंधों की समरसता को बुरी तरह छिन्न–भिन्न कर दिया है। आये दिन हो रहे, बढ़ते जा रहे क्रूर यौन कुकर्म, बलात्कार इसी समस्या की ओर दृष्टिपात करा रहे हैं। 'कामायनी' जिसे आधुनिक समय का महाकाव्य माना जाता है, उसमें भी जयशंकर प्रसाद नारी को श्रद्धा और दैवीय रूप में प्रस्तुत करते हैं–

"नारी! तुम केवल श्रद्धा हो
विश्वास रजत नग पग तल में
पीयूष स्रोत–सी बहा करो
जीवन के सुंदर समतल में।"[5]

साथ ही वे को स्त्री–पुरुष सम्बन्ध में समरसता को स्थापित करने की बात भी करते हैंकृ"तुम भूल गए पुरुषत्व मोह में कुछ सत्ता है नारी की/समरसता है संबंध बनी अधिकार और अधिकारी की।"[6]
जिस तरह प्राचीन काल में अनेक प्रथाओं और कुरीतियों ने नारी को दुर्बल बनाया, उसी प्रकार आधुनिक समाज ने भी ऐसी कई यंत्रणाएँ नारी को दी हैं जिसमें स्त्री अपनी भूख को मिटाने के लिए अपना शरीर तक झोंक दी है। हीरानंद सच्चिदानंद वात्स्यायन 'अजेय' अपने निबध 'हमारे समाज में नारी' में लिखते हैं– "कम से कम आठ–नौ सौ वर्षों से हमारे समाज में यही मानसिकता पनपती आयी है। हम ऐसा मानने के आदी हो गए हैं और पश्चिमी शिक्षा ने भी हमें यह सिखाया है और आज का पढ़े–लिखों का नारी आंदोलन भी ऐसा ही समझने लगा है– (और नई राजनीतिक शिक्षा भी नारी के प्रति पूरे समाज के अत्याचार को केवल आर्थिक शोषण के साथ जोड़कर और भी भ्रम पैदा करती है)– कि इस देश में नारी हमेशा से दलित, शोषित और उत्पीड़ित थी।"[7] आधुनिक समाज की ऐसी विसंगति को बालकृष्ण भट्ट अपने निबंध 'हमारी ललनाओं की शोचनीय दशा' के माध्यम से सामने लाते हैं। स्त्री–पुरुष सम्बन्धों में भेदभाव को देहाती बोल–चाल के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए कहते हैंकृ"बाबू साहब छँदान तोड़ विलाइत की राह सिधारने के लिए कदम उठाए हुए हैं। बबुआइन घर बैठी गोबर ही थापती रहीं। बाबू साहब, लाला साहब मिस्टर सो एण्ड सो कहे जाने की उमंग में फूले नहीं समाते। ललाइन कौआ हकनी ही रही आईं।३ घर में बीवी साहब चक्किया पीस मोटा–झोटा खा किसी तरह दिन काटती है।"[8]
आज के समय में जहाँ स्त्री–पुरुष के समान अधिकार का हवाला दिया जा रहा है, वहीं उनके बीच के सम्बंधों को गलत दृष्टि से देख रहा है। उनके अनुसार आज का सम्बन्ध केवल दैहिक सम्बन्ध है। मित्रता के आज कोई मायने नहीं। ऐसी सोच को विश्लेषित करते हुए और पौराणिक आख्यान का हवाला देते हुए राममनोहर लोहिया महत्वपूर्ण टिप्पणी करते हैं। वे अपने 'कृष्ण' शीर्षक ललित निबंध में पौराणिक कथाओं के माध्यम से स्त्री–पुरुष के बीच सखा–सखी का संबंध द्रौपदी और कृष्ण के सम्बन्ध के माध्यम से समझाते हैं। निबंधकार आज के समाज को प्रश्नांकित करता है। वे कृष्ण की मित्रता को बताते हुए कहते हैं कि भले ही कृष्ण छलिया था पर वचनबद्ध था। जब भी द्रौपदी ने कृष्ण को बुलाया वह आया। लोहिया जी स्त्री–पुरुष के मैत्री सम्बन्ध को प्रस्तुत कर समाज में सम्बन्धों की गरिमा सामने रखते हैं। किंतु समाज की परिस्थितियाँ और इससे उत्पन्न कुंठित मानसिकता इतनी हावी हो गई है कि लोग इस संबंध को बहुत कम ही स्वीकार कर पाते हैं। स्त्रियों पर हो रहे दुव्यवहार, शोषण, अत्याचार और सबसे अधिक आये दिन बलात्कार के किस्से ऐसे वातावरण में कोई किसी पर ना भरोसा कर पा रहा है। और ना द्रौपदी और कृष्ण के मित्रता को। यही कारण है कि वर्तमान परिवेश स्त्री को लेकर अपनी संकुचित मानसिकता का प्रदर्शन कर रहा है। विख्यात निबंधकार विद्यानिवास मिश्र से संवाद में जब डॉ. पुष्पिता ने प्रश्न किया कि आज स्त्रियों को अपने अस्तित्व को लेकर किन संघर्षों का सामना करना पड़ रहा है, तब उनका कहना था कि आज के समय में स्त्रियों के लिए असह्य पीड़ा के खतरे मौजूद हैं, क्योंकि आज पुरुष प्रभुता के साथ–साथ हिंसा के प्रदर्शन से भी अपनी सत्ता प्रमाणित करना चाहता है। स्त्री तब भोग्या रही, आज ऐसी वस्तु हो गयी है जो बेची ही नहीं जाती, कूड़ेदान में डाल दी जाती है। इसका कारण मिश्र जी मानते हैं कि आज का उपभोक्तावादी मनुष्य या उसकी सभ्यता स्त्री को केवल एक ही दृष्टि से देखना चाहती है।

संदर्भ सूची

1. हिंदी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, लोकभारती प्रकाशन, बीसवाँ संस्करण 2022, पृष्ठ 346
2. रामचरितमानस, सुंदरकांड, 58/3
3. भारतीय नारी शोषण के बदलते आयाम, डा. मंजुलता छिल्लर, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, पृष्ठ 24
4. राग–विराग, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सं. रामविलास शर्मा, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2020, पृष्ठ 118–119
5. कामायनी, (लज्जा सर्ग) जयशंकर प्रसाद, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2015, पृष्ठ 34
6. उपरोक्त, इड़ा सर्ग, पृष्ठ 53
7. केन्द्र और परिधि, अज्ञेय, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण 1984, पृष्ठ 223
8. हिंदी साहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन, डा. बाबूराम, वाणी प्रकाशन, संस्करण 2007, पृष्ठ 133